Ll.b.
2semester
Legal history.

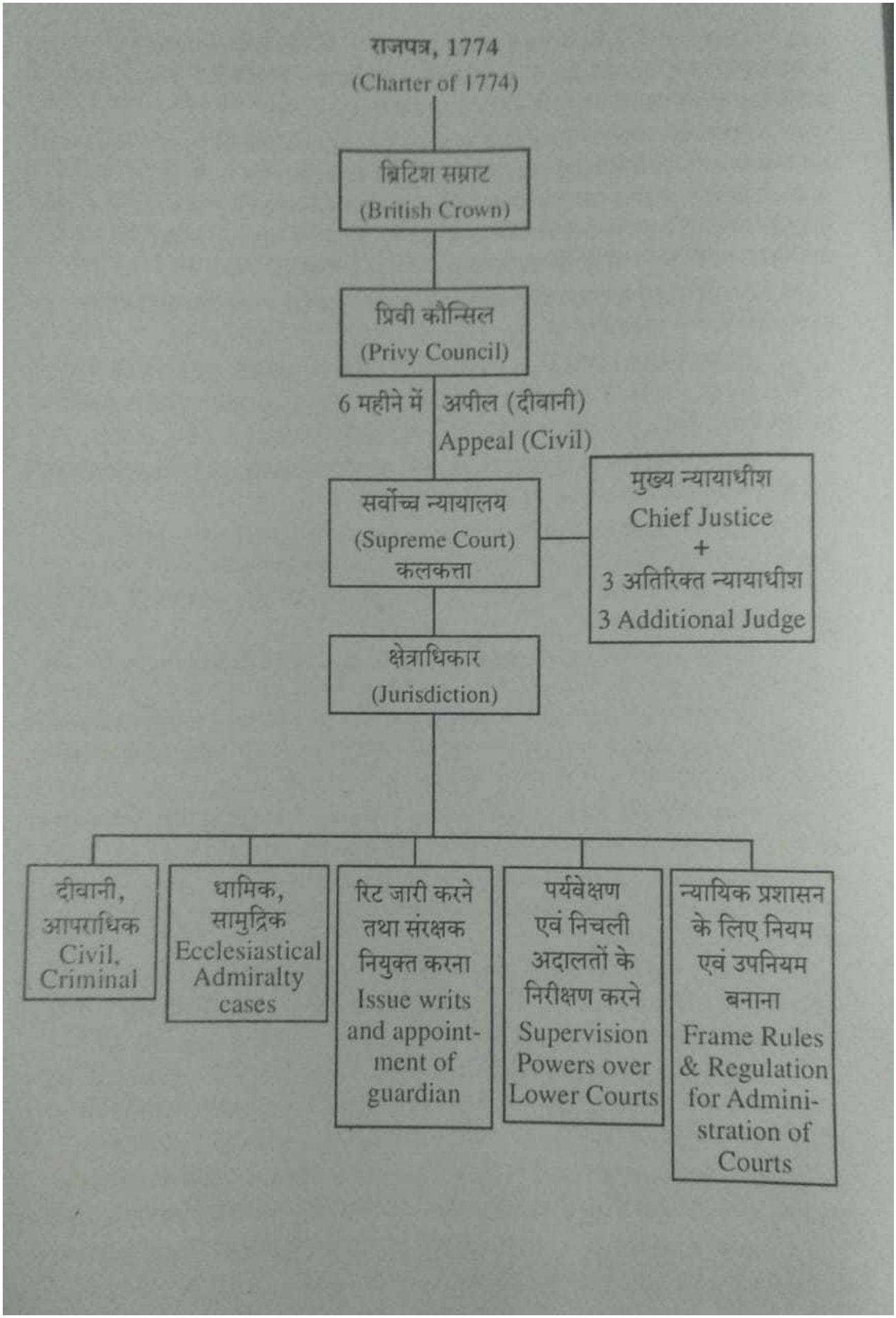
राजपत्र, 1774
(Charter of 1774)
ब्रिटिश सम्राट
(British Crown)
प्रिवी कौन्सिल
(Privy Council)
6 महीने में
अपील (दीवानी)
Appeal (Civil)
सर्वोच्च न्यायालय
(Supreme Court)
कलकत्ता
मुख्य न्यायाधीश
Chief Justice
+
3 अतिरिक्त न्यायाधीश
3 Additional Judge
क्षेत्राधिकार
(Jurisdiction)
दीवानी,
आपराधिक
Civil,
Criminal
धार्मिक,
सामुद्रिक
Ecclesiastical
Admiralty
cases
रिट जारी करने
तथा संरक्षक
नियुक्त करना
Issue writs
and appoint-
ment of
guardian
पर्यवेक्षण
एवं निचली
अदालतों के
निरीक्षण करने
Supervision
Powers over
Lower Courts
न्यायिक प्रशासन
के लिए नियम
एवं उपनियम
बनाना
Frame Rules
& Regulation
for Admini-
stration of
Courts

कलकत्ता में उच्चतम न्यायालय

Supreme Court at Calcutta

1774 का राजपत्र

1774 का राजपत्र भारतीय विधि तथा न्यायिक संस्थाओं के विकास के इतिहास में एक महत्वपूर्ण घटना है।

रेग्यूलेटिंग अधिनियम, 1773 के द्वारा भारत में (तीनों प्रेसीडेन्सी) में तत्कालीन न्याय व्यवस्था जिसे सन् 1726 एवं 1753 के राजपत्रों द्वारा स्थापित की गई थी को सुव्यवस्थित एवं सुधारने का प्रयत्न किया गया था। तत्कालीन प्रचलित न्याय व्यवस्था (मेयर न्यायालय) यथोचित न्याय प्रशासन करने में असमर्थ थे। इसलिए यह आवश्यक हो गया था कि एक सुदृढ.न्याय व्यवस्था की स्थापना की जाये। 1774 में स्थापित की गई न्याय व्यवस्था प्रायोगिक रूप से कलकत्ता प्रेसीडेन्सी में लागू की जानी थी। प्रयोग के सफल होने पर उसे अन्य प्रेसीडेन्सी नगरों में स्थापित किया जाना था।

1773 के अधिनियम में इंग्लैण्ड के सम्राट् को प्राधिकृत किया गया था कि वह एक राजपत्र जारी करके भारत में कलकत्ता में उच्चत्तम न्यायालय की स्थापना करे, इस अधिकार का प्रयोग करते हुए इंग्लैण्ड के सम्राट् जार्ज तृतीय ने 26 मार्च, 1774 को न्याय का राजपत्र (Charter of Justice) 1774 जारी किया जिसके द्वारा कलकत्ता में (फोर्ट विलियम) में उच्चतम न्यायालय की स्थापना की गई।

यह राजपत्र 1773 के न्यायिक प्रावधानों के अनुसार एवं उसके आधार पर आधारित था। इस अधिनियम में प्रदत्त की गई सीमाओं के अन्तर्गत राजपत्र में विस्तारित रूप से न्यायालय की संरचना, क्षेत्राधिकार एवं संचालन व्यवस्था को पूर्णरूप से परिभाषित किया गया था।

1774 में स्थापित किया जाने वाला उच्चतम न्यायालय इंग्लैण्ड में कार्यरत स्वतन्त्र न्यायालयों का संमिश्रण था। इसे इंग्लैण्ड में कार्यरत सभी न्यायालयों का क्षेत्राधिकार प्रदत्त किया गया था। उन स्वतन्त्र क्षेत्राधिकार रखने वाले न्यायालयों के नामों के अनुरूप उच्चतम न्यायालय के शाखाओं का नामकरण किया गया था।

भारत में स्थापित इस प्रकार की न्याय व्यवस्था इंग्लैण्ड में सन् 1873 में ज्यूडीकेचर अधिनियम द्वारा स्थापित की गई। इस प्रकार भारतीय विधि का विकास इंग्लैण्ड के विधि के विकास की तुलना में पूर्ववर्ती है।[1]

सन् 1873 से पूर्व इंग्लैण्ड में विभिन्न प्रकार के न्यायालय कार्यरत थे, जो चांसरी ऐक्सचेकर, किंग्स बैन्च, सामुद्रिक, धार्मिक तथा प्रोबेट के न्यायालय कहलाते थे। ज्यूडीकेचर अधिनियम, 1873 के द्वारा इन

1. प्रो. एल.बी. परांजपे—भारतीय विधि का इतिहास (1992) पृष्ठ 79.

सभी न्यायालयों को समाप्त करके एक सुप्रीम कोर्ट ऑफ ज्यूडीकेचर की स्थापना की गई। भारत में इस प्रकार के न्यायालय की स्थापना 1774 में ही कर दी गई थी।

डॉ. एम.पी. जैन[1] के अनुसार उच्चतम न्यायालय को यह निर्धारित करने की शक्तियाँ प्रदान की गई कि कितने अधिवक्ता एवं एटर्नी न्यायालय में उपस्थित हो सकेंगे तथा वे कौन व्यक्ति होंगे। केवल ऐसे अधिवक्ता ही न्यायालय में उपस्थित हो सकेंगे, पैरवी कर सकेंगे एवं अपने पक्षकारों की ओर से कार्य कर सकेंगे। युक्तियुक्त कारण होने पर न्यायालय अधिवक्ताओं को हटा भी सकता था। न्यायाधीशों को राजद्रोह एवं महापराध को छोड़कर अन्य मामलों में कारावासित नहीं किया जा सकता था।

(The Court was empowered to admit such and so many advocates and attornies as it thought proper. Only they were to be entitled to appear, plead and act on behalf of the suitors in the court. The court was authorised to remove any of the advocates from the rolls on reasonable cause. Judges were to be exempt from imprisonment except for treason or felony.)

न्यायालय की संरचना—उच्चतम न्यायालय में एक मुख्य न्यायाधीश तथा तीन अन्य न्यायाधीश हो सकते थे। सर ऐलिजा इम्पे को मुख्य न्यायाधीश तथा चैम्बर्स, स्टीफेन एवं हाइड न्यायाधीश को राजपत्र, 1774 के द्वारा नियुक्त कर दिया गया था। न्यायाधीशों का सेवाकाल एवं अन्य शर्तें इंग्लैण्ड के सम्राट् की इच्छा पर निर्भर थीं।

न्यायाधीशों की अर्हता—न्यायाधीशों की अर्हताओं का उल्लेख सन् 1773 के रेग्यूलेटिंग अधिनियम में कर दिया गया था। उसके अनुसार न्यायाधीशों के लिए आवश्यक था कि उन्हें कानून का ज्ञान हो तथा वे कम से कम पाँच वर्ष तक इंग्लैण्ड में बेरिस्टर रहे हों।

क्षेत्राधिकार—उच्चतम न्यायालय के क्षेत्राधिकार को राजपत्र के द्वारा एवं व्यापक रूप में वर्णित करने का प्रयास किया गया था। जहाँ इसे विभिन्न विषयों पर व्यापक क्षेत्राधिकार प्रदान किया गया था। वही उसके क्षेत्राधिकार में आने वाले व्यक्तियों की श्रेणी सीमित रखी गई।

व्यक्तियों पर क्षेत्राधिकार

(i) कम्पनी

(ii) कलकत्ता नगर निगम तथा उसके कर्मचारी,

(iii) बंगाल, बिहार एवं उड़ीसा क्षेत्र में निवास करने वाले इंग्लैण्ड तथा इंग्लैण्ड के सम्राट् की प्रजा, इन व्यक्तियों, इस क्षेत्र में अर्जित सम्पत्ति या ऋण हो।

(iv) ऐसी प्रजाओं के मृत्यु के इच्छा-पत्र का प्रबन्धकर्ता या प्रवर्तक

(v) कम्पनी, इंग्लैण्ड तथा इंग्लैण्ड की सम्राट् की प्रजा के द्वारा प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से नियुक्त किये गये सेवक।

(vi) बंगाल बिहार एवं उडीसा के निवासी जिन्होंने लिखित संविदा की हो कि पाँच सौ रुपये से अधिक दीवानी मामलों में वाद उत्पन्न होने पर उच्चतम न्यायालय के क्षेत्राधिकार को तथा उसके निर्णय को मानेंगे।

(vii) दीवानी तथा अपकृत्य के मामले में उच्चतम न्यायालय को सपरिषद् महा राज्यपाल के सदस्यों पर क्षेत्राधिकार प्राप्त था।

(viii) सामान्यतया उच्चतम न्यायालय सपरिषद् महाराज्यपाल के सदस्यों के विरुद्ध विद्रोह या राजद्रोह जैसे जघन्य अपराध के अतिरिक्त दूसरे अपराधों का परीक्षण नहीं कर सकता था।

1. Outlines of Indian Legal & Constitutional History.

(ix) सपरिषद् महाराज्यपाल तथा न्यायाधीशों को उपर्युक्त अपराधों के अतिरिक्त बन्दी नहीं बनाया जा सकता था।

(x) उच्चतम न्यायालय को बंगाल, बिहार एवं उड़ीसा क्षेत्र में निवास करने वाले भारतीयों पर आपराधिक क्षेत्राधिकार नहीं प्राप्त था।

उच्चतम न्यायालय के विभिन्न क्षेत्राधिकार—उच्चतम न्यायालय की विभिन्न शाखाओं का नामकरण इंग्लैण्ड में कार्यरत विभिन्न न्यायालयों के नाम पर किया गया था। इस न्यायालय को वे सभी अधिकार प्रदत्त किये गये थे, जो इंग्लैण्ड के विभिन्न न्यायालयों में अलग-अलग विहित थे। इसका उद्देश्य था कि एक सुव्यवस्थित तथा सुदृढ़ न्याय व्यवस्था को स्थापित कर उचित ढंग से न्याय किया जा सके। यह एक साम्या विधि का न्यायालय था, इसे इंग्लैण्ड के हाइकोर्ट ऑफ चान्सरी के न्यायालय के नियम एवं प्रक्रिया के अनुसार न्याय प्रशासन चलाने का अधिकार प्रदान किया गया था। यह अपनी प्रक्रिया स्वयं निर्धारित कर सकता था। ये नियम किंग इन काउन्सिल द्वारा स्वीकृत, अस्वीकृत तथा संशोधित किये जा सकते थे।[1]

1. **दीवानी क्षेत्राधिकार**—इस क्षेत्र में इसे व्यापक क्षेत्राधिकार प्रदान किया गया था। उच्चतम न्यायालय साम्या का न्यायालय था। इस रूप में यह इंग्लैण्ड की हाईकोर्ट ऑफ चान्सरी का न्यायालय था। यह न्याय साम्या तथा सद्विवेक के अनुसार जो न्याय संगत मालूम पड़ता था, निर्णय कर सकता था। इस प्रकार की सुविधा प्रदान करने का कारण था कि आरम्भ में न्यायाधीशों को समुचित विधि के अभाव में उनके समक्ष विवादित मामलों को निर्णीत करने में असुविधा उत्पन्न न हो। वे ऐसे विवादित मामले होते थे, जिनमें निश्चित विधि के प्रावधान नहीं थे।

2. **आपराधिक मामलों में क्षेत्राधिकार**—यह न्यायालय ओयर, टर्मिनर तथा जेल डिलिवरी का न्यायालय था। स्थानीय क्षेत्र के आपराधिक वादों पर मौलिक अधिकार प्राप्त थे। न्यायालय द्वारा ग्रान्ड तथा पेटी जूरी का प्रयोग किया जाता था।

आपराधिक वादों में निर्णय में कलकत्ता में निवास करने वाले इंग्लैण्ड की प्रजा में से ही जूरी का गठन करने का प्रावधान था।

सभी तरह के सामान्य तथा गम्भीर अपराधों का परीक्षण करने तथा दण्ड देने का अधिकार न्यायालय को था।

न्यायालय को व्यक्तियों पर दीवानी क्षेत्राधिकार की तरह ही आपराधिक क्षेत्राधिकार प्राप्त था।

उच्चतम न्यायालय को किसी अन्य न्यायालयों द्वारा दिए गए दण्ड मृत्युदण्ड सहित को कम, समाप्त एवं परिवर्तित करने का अधिकार प्राप्त था। मृत्युदण्ड के मामले में यदि न्यायालय को समुचित कारण लगता था तो वह दण्ड को स्थगित करके उसका सारा रिकॉर्ड अपनी सिफारिश सहित ब्रिटिश सम्राट् के पास क्षमा की याचना के लिए भेज सकती थी।

3. **धार्मिक क्षेत्राधिकार** (Ecclesiastical)—ब्रिटेन में धर्म से सम्बन्धित वादों की सुनवाई पादरी या धर्माधिकारियों के न्यायालयों द्वारा की जाती थी। निर्णय गिरिजाघर के नियमों पर आधारित होते थे। उच्चतम न्यायालय को भी यह क्षेत्राधिकार ब्रिटिश प्रजा पर प्राप्त हुआ था।

न्यायालय मृतक के वारिसों को वसीयत का आज्ञापत्र या लेटर ऑफ एडमिनिस्ट्रेशन (अनुमति पत्र) प्रदान कर सकता था।

इस प्रकार के क्षेत्राधिकार भारत के लिये एक नयी प्रथा थी।

4. **सामुद्रिक मामलों में क्षेत्राधिकार**—इस न्यायालय को बंगाल, बिहार और उड़ीसा क्षेत्र के लिये सामुद्रिक न्यायालय का क्षेत्राधिकार प्राप्त था। यह जूरी के द्वारा उपर्युक्त क्षेत्र में होने वाले समुद्र, समुद्रतट और जहाजों पर होने वाले, दीवानी, आपराधिक तथा व्यापारिक मामलों की सुनवाई कर निर्णीत कर सकता था।

1. कैलाश राय—भारत का वैधानिक एवं संवैधानिक इतिहास (1988) पृ. 66

5. रिट क्षेत्राधिकार—अपने अधीनस्थ आने वाले न्यायालयों तथा निरीक्षण को प्रभावी बनाने के लिये उच्चतम न्यायालय को किंग्स बेन्च की ही तरह तमाम मुद्रांकित आज्ञापत्र जारी करने का अधिकार था। यह सर सियोरी, परमादेश, हेवियस कार्पस, प्राहिविशन रिट ऑफ केपियस आदि जारी कर सकती थी। इनको न मानने पर न्यायालय के अपमान के लिये दण्डित किया जा सकता था।

6. पर्यवेक्षण एवं निरीक्षण का क्षेत्राधिकार—उच्चतम न्यायालय होने के कारण अधीनस्थ न्यायालयों पर प्रभुत्व रखता था। प्रार्थना न्यायालय, शांति के न्यायाधीश एवं सत्र न्यायालय इस न्यायालय के अधीन एवं नियन्त्रण में थे। उच्चतम न्यायालय का यह क्षेत्राधिकार इंगलैण्ड के किंग्स बेन्च की तरह ही था। इसके इस क्षेत्राधिकार में सभी न्यायाधीश, न्यायिक अधिकारी मजिस्ट्रेट, जमींदार, मालगुजारी वसूल करने वाले आदि सभी सम्मिलित थे।

7. संरक्षक—नियुक्त करने का क्षेत्राधिकार अवयस्कों तथा पागलों के लिये तथा उनकी सम्पत्ति के लिये संरक्षक नियुक्त करने का अधिकार था। ये नियुक्तियाँ इंग्लैण्ड में प्रचलित नियमों के अनुसार की जानी होती थीं।

8. नियम बनाने का अधिकार—उच्चतम न्यायालय को न्याय देने एवं न्याय व्यवस्था को संचालित करने तथा इसके लिये कर्मचारियों की नियुक्ति करने न्यायालय में उपस्थित होने वाले वकीलों तथा शेरिफ की नियुक्ति करने के लिये नियम बना सकती थी। इन साधारण नियमों का किंग-इन-काउन्सिल से अनुमोदन होना आवश्यक था।

9. शांति के न्यायाधीश—उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश एवं स्परिषद् महाराज्यपाल के सदस्य शांति के न्यायाधीश नियुक्त किये जाते थे। इन्हें अभियुक्त को गिरफ्तार करके मामले की छानबीन करने का तथा साधारण अपराध के मामलों में दण्ड देने का अधिकार था। जघन्य अपराध के अभियुक्त को अपनी रिपोर्ट के साथ उच्चतम न्यायालय (ओयर टर्मिनर एवं जेल डिलीवरी के न्यायालय) को भेज देते थे। इस प्रकार की परम्परा इंग्लैण्ड में थी जिसे भारत में भी लागू किया गया।

अपील—उच्च्चतम न्यायालय से अपील किंग-इन-काउन्सिल को भेजी जा सकती थी।

(i) दीवानी वादों से—उच्चतम न्यायालय के निर्णयों की अपील साधारण रूप में 1000 पेगोड़ा मूल्य के वादों में न्यायालय की अनुमति से निर्णय के 6 माह के अन्दर किंग-इन-काउन्सिल को की जा सकती थी।

(ii) आपराधिक मामलों में—ऐसे मामलों में उच्चतम न्यायालय को पूर्ण विवेकाधिकार था कि वह अपील किंग-इन-काउन्सिल को भेजे या नहीं।

(iii) किंग-इन-काउन्सिल का विशेषाधिकार—किंग-इन-काउन्सिल को सुरक्षित अधिकार था कि वह किसी भी मामले में अपील स्वीकार करे या न करे। उच्चतम न्यायालय का अनुमति-पत्र काउन्सिल के इस क्षेत्राधिकार पर कोई प्रभाव नहीं रखता था।

सन् 1773 के अधिनियम तथा 1774 के राजपत्र के द्वारा कलकत्ता में उच्चतम न्यायालय की स्थापना की गई। बाद में मद्रास व बोम्बे में भी इसी प्रकार के न्यायालय की स्थापना की गई।

परन्तु उपर्युक्त अधिनियम एवं राजपत्र के अस्पष्टता के कारण उच्चतम न्यायालय को काफी कठिनाईयों का सामना करना पड़ा। इन्हें दूर करने के लिये ब्रिटिश संसद को 1781 में बन्दोबस्त अधिनियम पास करना पड़ा।

सन् 1774 के राजपत्र की समालोचना

राजपत्र के गुण—सन् 1753 के राजपत्र द्वारा स्थापित न्यायालयों की कार्यप्रणाली सन्तोषजनक नहीं रही थी। तत्कालीन न्यायव्यवस्था में परिवर्तन लाने के उद्देश्य से 1773 का अधिनियम पर आधारित 1774 का राजपत्र जारी किया गया था। जिसके अन्तर्गत उच्चतम न्यायालय की स्थापना कलकत्ता में की गई थी। न्यायालय का क्षेत्राधिकार तकनीकी तथा नवीन शब्दों के द्वारा परिभाषित किया गया था। इन शब्दों को परिभाषित

नहीं किया गया था जिसके कारण न्यायालय को क्षेत्राधिकार के प्रयोग में काफी विषमताओं का सामना करना पड़ा तथा कम्पनी की न्याय व्यवस्था, देशी भारतीयों एवं शासन के साथ न्यायालय का टकराव होता रहा। उच्चतम न्यायालय उन उद्देश्यों की पूर्ति नहीं कर पाया, जिसके लिये उसे स्थापित किया गया था।

फिर भी इस न्यायालय की अपनी निम्नलिखित विशेषताएँ थी—

(1) **न्यायाधीश विधिवेत्ता** (Judge Law Knowing)—न्यायालय के न्यायाधीश कम से कम पांच वर्ष के अनुभव वाले बेरिस्टर ही हो सकते थे। इस प्रकार 1774 के राजपत्र द्वारा विधि के ज्ञाता को न्यायाधीश नियुक्त किया गया। यह एक उपलब्धि थी 1774 के न्याय प्रशासन की।

(2) **न्यायपालिका एवं कार्यपालिका की शक्तियों का पृथक्करण** (Separation of Power of Executive and Judiciary)—सन् 1773 के अधिनियम एवं 1774 के राजपत्र के द्वारा न्यायपालिका एवं कार्यपालिका के कार्यों का पृथक्करण कर दिया गया। न्यायपालिका कार्यपालिका से स्वतंत्र थी। न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति ब्रिटिश सम्राट् के द्वारा की जाती थी तथा उनका कार्यकाल भी उसी पर निर्भर करता था। इससे अपील भी इंगलैण्ड में स्थित किंग-इन-कॉउन्सल को जाती थी।

(3) **क्षेत्राधिकार**—उच्चतम न्यायालय को विस्तृत क्षेत्राधिकार दिया गया था। बंगाल, बिहार एवं उड़ीसा में रहने वाले ब्रिटेन एवं ब्रिटेन के सम्राट् की प्रजा पर भी इसके क्षेत्राधिकार को विस्तृत किया गया जो इससे पूर्व के मेयर न्यायालय के पास नहीं था।

(4) **साम्या एवं विधि का न्यायालय**—उच्चतम न्यायालय इंगलैण्ड के साम्या एवं विधि के न्यायालयों का मिश्रित रूप था, जो इंगलैण्ड के न्यायालयों से उन्नत था। इंगलैण्ड में कार्यरत सभी विभिन्न न्यायालयों का क्षेत्राधिकार उच्चतम न्यायालय को दे दिया गया था।

(5) **निम्न स्तरीय न्यायालय एवं कम्पनी के कर्मचारियों पर नियंत्रण**—उच्चतम न्यायालय को निम्नस्तरीय न्यायालय एवं कम्पनी के कर्मचारियों पर नियंत्रण एवं पर्यवेक्षण का अधिकार महत्वपूर्ण अधिकार था। इस प्रकार के नियंत्रण एवं पर्यवेक्षण की आवश्यकता काफी लम्बे समय से कम्पनी महसूस कर रही थी जिसे इस राजपत्र के द्वारा पूर्ण कर दिया गया।

1774 के राजपत्र के दोष—उपर्युक्त सभी प्रकार की विशेषताओं के होते हुये भी 1774 के राजपत्र के प्रावधानों के दोषपूर्ण व अस्पष्ट होने से यह अपने उच्चतम न्यायालय की स्थापना के उद्देश्य को प्राप्त करने में विफल रहा।

1. **राजपत्र द्वारा प्रयुक्त शब्दों का अस्पष्ट होना**—सन् 1774 के राजपत्र में कई शब्दों का प्रयोग किया गया था जैसे ब्रिटिश प्रजा, ब्रिटिश सम्राट् की प्रजा, नेटिव प्रत्यक्ष एवं परोक्ष कम्पनी के कर्मचारी आदि इन शब्दों को स्पष्ट नहीं किया गया था। न्यायालय इन शब्दों का अर्थ व्यापक मानती थी, जबकि सर्वोच्च परिषद इन शब्दों का अर्थ सीमित मानती थी, परिणामस्वरूप सर्वोच्च परिषद्, देशी भारतीय कम्पनी के न्यायालयों तथा उच्चतम न्यायालय के बीच संघर्ष उत्पन्न हो गया।

2. **उच्चतम न्यायालय का अस्पष्ट क्षेत्राधिकार**—न्यायालय का क्षेत्राधिकार अस्पष्ट था। इसका क्षेत्राधिकार मौफ्फासिल क्षेत्रों में रहने वाले कुछ व्यक्तियों पर भी विस्तारित कर दिया गया था। इस क्षेत्राधिकार को पूर्णरूपेण स्पष्ट नहीं किया गया था। जिससे भ्रांन्तियाँ उत्पन्न हो गई थीं।

3. **कम्पनी के न्यायालय तथा उच्चतम न्यायालय के सम्बन्ध**—राजपत्र में कम्पनी के दीवानी एवं आपराधिक न्यायालयों (मौफ्फसिल क्षेत्र के न्यायालय) तथा उच्चतम न्यायालय के सम्बन्ध के बारे में कुछ नहीं बताया गया था। उच्चतम न्यायालय उनके अस्तित्व को नहीं मानती थी उनके हर कार्यों के लिए वह उन्हें अपने प्रति उत्तरदायी मानती थी। कम्पनी के अदालतों के निर्णयों को मानने से उच्चतम न्यायालय इन्कार कर देता था तथा उनके सभी कर्मचारियों पर अपना क्षेत्राधिकार मानता था जिसके कारण संघर्ष एवं तनाव उत्पन्न हो गया। (पटना तथा कासी जुराह वाद)

4. उच्चतम न्यायालय एवं सर्वोच्च परिषद् के सम्बन्ध—इन दोनों के सम्बन्धों को राजपत्र द्वारा स्पष्ट नहीं किया गया था। परिषद् की क्या कोई जबावदेही सरकारी तौर पर किये गये कार्यों के लिए न्यायालय के प्रति थी। इसका जवाब राजपत्र में नहीं था। न्यायालय को सपरिषद महाराज्यपाल के सदस्यों पर राजद्रोह एवं जघन्य अपराध के अतिरिक्त अन्य मामलों में क्षेत्राधिकार नहीं था। दीवानी मामलों में इन्हें उन्मुक्ति थी या नहीं यह स्पष्ट नहीं किया गया था। परिणामस्वरूप दोनों में तनाव व संघर्ष रहा। (कासी जुराह वाद इसका प्रमुख उदाहरण है।)

5. उच्चतम न्यायालय एवं कम्पनी दीवान के रूप में—कम्पनी की दीवान के रूप में क्या जवाबदेही होगी। उच्चतम न्यायालय के प्रति यह नहीं स्पष्ट किया गया था। न्यायालय कम्पनी के सभी दीवानी मामलों में अपना क्षेत्राधिकार मानता था तथा समय-समय पर इसके कार्यों में हस्तक्षेप करता रहता था। जिससे कम्पनी के न्यायालय से सम्बन्ध बिगड़ गये।

6. उच्चतम न्यायालय व मुगल सम्राट् के सम्बन्ध—कम्पनी के पास मौफ्फसिल क्षेत्र की दीवानी थी। इस क्षेत्र में मुगल सम्राट् का अस्तित्व भी मौजूद था। उच्चतम न्यायालय मुगल सम्राट् के अस्तित्व को मान्यता नहीं देती थी, जबकि व्यावहारिक रूप में इसका अस्तित्व मौजूद था। राजपत्र में भी इसका कोई उल्लेख नहीं किया गया था। इनके आपसी सम्बन्ध अस्पष्ट थे।

7. उच्चतम न्यायालय द्वारा निर्णयों में प्रयोग की जाने वाली विधि तथा प्रक्रिया—न्याय किस विधि द्वारा किया जाये इसके लिए कोई स्पष्ट प्रावधान राजपत्र में नहीं था। न्यायालय द्वारा अंग्रेजी विधि का प्रयोग किया जाता था, जो भारतीय परिस्थितियों के लिए अनुकूल हो; परन्तु कौनसी परिस्थितियाँ अनुकूल होगी। यह निर्णय न्यायालय द्वारा ही किया जाना था। जिसके परिणाम गम्भीर निकलते थे। (राजा नन्द कुमार का वाद)

न्यायालय द्वारा प्रयोग की जाने वाली प्रक्रिया व तकनीकी पूर्णरूप से जटिल अंग्रेजी व्यवस्था पर आधारित थी जिनका ज्ञान भारतीयों को नहीं था। कोई व्यक्ति उच्चतम न्यायालय के क्षेत्राधिकार में आता है या नहीं इसका निर्णय न्यायालय द्वारा किया जाता था, उसके लिए व्यक्ति को स्वयं उपस्थित होकर या बेरिस्टर के द्वारा अपना पक्ष न्यायालय में रखना पड़ता था। व्यक्तियों को कलकत्ता तक पहुँचने में काफी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था; क्योंकि यातायात के साधन उपलब्ध नहीं थे उस समय। बेरिस्टर को भी भारी भरकम फीस देनी पड़ती थी, जो एक साधारण व्यक्ति के लिए सम्भव नहीं होता था। ऐसे मामलों में व्यक्तियों को अरेस्ट इन प्रोसेस के द्वारा गिरफ्तार करके जेल में डाल दिया जाता था। यह सबसे जटिल प्रक्रिया थी। जिससे भारतीयों को काफी कठिनाइयों एवं परेशानी का सामना करना पड़ा।

न्यायाधीशों को शान्ति का न्यायाधीश नियुक्त किया जाना—उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों को बंगाल, बिहार एवं उड़ीसा के क्षेत्र के लिए शान्ति का न्यायाधीश नियुक्त किया गया था। राजपत्र में इससे सम्बन्धित प्रावधान की शब्दावली अस्पष्ट एवं भ्रामक थी। इन न्यायाधीशों का क्षेत्राधिकार इन क्षेत्रों में क्या सभी व्यक्तियों पर था, क्या राजस्व नहीं देने वाले गिरफ्तार व्यक्तियों के लिए हेवियस कॉरपस की रिट जारी की जा सकती थी? इसको स्पष्ट नहीं किया गया था।

उपर्युक्त कमियों व अस्पष्टताओं के कारण उच्चतम न्यायालय अपने न्याय वितरित करने के उद्देश्य को प्राप्त करने में असफल रहा तथा इसके प्रति सभी तरफ से असन्तोष सामने आने लगा। परिणामस्वरूप 1781 में ब्रिटिश संसद द्वारा बन्दोबस्त अधिनियम पारित किया गया।

❑❑❑